THE TIMES OF INDIA

Date:29-02-20

Come a long way: Gender equality, 25 years after Beijing

TOI Editorial

UN's landmark Beijing declaration of 1995 affirmed that women's rights are human rights. This week, UN human rights commissioner Michelle Bachelet observed that while there is more collective commitment to gender rights, there is also a backlash that must be contended with. It is worth celebrating that the number of women parliamentarians has almost doubled since 1995, that more than 150 countries have laws on sexual harassment. There is better data on violence against women, their presence in paid jobs has increased, child marriage has decreased.

That said, violence itself is huge and pervasive, and women are still worse off when it comes to employment and life chances. Improving this situation takes constant effort, progress is never automatic. Our understanding of gender has evolved since the 1995 Beijing declaration – the quest for equal dignity has to include the LGBTQIA community and everyone with stakes in dismantling patriarchy. What's more, the backlash against women's freedoms is all too real, as nationalist governments around the world have tried to dilute equality seeking laws, and encourage social movements that stress traditional family values over sexual and reproductive rights, and so on.

However, there is also a wave of global activism, from the women's marches in the US to the MeToo movement and NiUnaMenos in Latin America, our own mobilisations in India. Patriarchy is a big beast to tackle, it rears back constantly. Note how Delhi's AAP government, elected by a decisive women's vote, chose not to include a single woman in its Cabinet.

THE ECONOMIC TIMES

Date:29-02-20

At last, a policy on rare diseases

ET Editorial

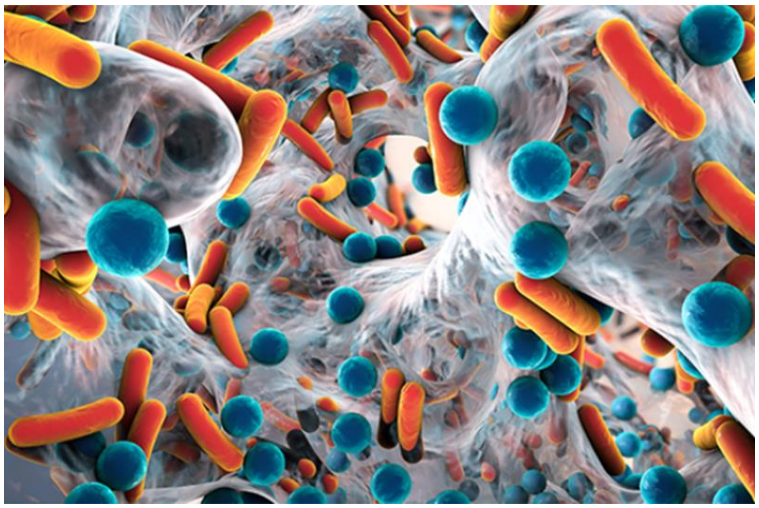

Human suffering comes in many forms, as a result of chance, folly or nature's quirks. Rare diseases are prime examples of the last category, arising from malfunctioning genes that disrupt normal life. Haemophilia, in which blood fails to clot, thalassaemia, sickle-cell anaemia and primary immunodeficiency are some of the rare diseases prevalent in India. Gaucher, Crohn's disease and Hunter are others. The last day of February is observed as the World Rare Disease Day, as the result of an initiative of the European Organisation for Rare Diseases.

India brought in, for the first time, a policy to address rare diseases in 2017, but suspended it for want of clarity, and set up a committee on the subject. Based on the committee's findings, the government has come out with a draft policy and opened it up to public comment.

This is most welcome. Government expenditure on healthcare is just about 1% of GDP in India. This has to go up, if India is to prosper. Within the meagre allocation for healthcare, how much can be allocated to diseases that are rare to begin with? At the same time, can the government afford to not save lives that can be saved by one-time organ transplants, alleviate suffering that can be alleviated through supplements and medication and take other measures to prevent, wherever possible, occurrence of such diseases?

The creation of a centralised registry to build a database on rare diseases is a welcome move. So is the attempt to crowdsource a fund from volunteer donors to finance research and treatment of rare diseases. Co-financing by the Centre and the states can help patients meet the cost of treatment, high per capita, but cumulatively small, because of the numbers. Support for genetic research would be an effective step, given its potential for wide-ranging benefits.

दैनिक भास्कर

Date:29-02-20

मीटू: वाइनस्टीन मामले से सबक ले भारतीय कानून

संपादकीय

हॉलीवुड प्रोड्यूसर हार्वे वाइनस्टीन को दुष्कर्म और यौन शोषण के मामलों में दोषी करार देने को मीटू मूवमेंट का अहम मोड़ माना जा रहा है। वाइनस्टीन को इस मामले में 5 से 25 साल तक की सजा हो सकती है। फैसला सुनाए जाने के बाद इस बदनाम 67 वर्षीय हॉलीवुड सेलिब्रिटी को हथकड़ी पहनाकर ले जाया गया। इसे अमेरिका की यौन शोषण पीड़ित महिलाओं के लिए बड़ा दिन बताया गया। लेकिन मसला सिर्फ अमेरिकी महिलाओं का नहीं है। ये फैसला दुनियाभर की औरतों के लिए अहम है। मीटू वह अभियान है जिसने तमाम महिलाओं को रसूख का फायदा उठाकर यौन शोषण कर रहे मर्दों के खिलाफ आवाज उठाने की हिम्मत दी। ऐसी अनगिनत महिलाओं ने भारत ही नहीं दुनियाभर में अपनी कहानी सुनाई लेकिन उन आरोपियों के खिलाफ चुनिंदा मामलों में ही सजा हो पाई। कारण कानूनी है। शायद यही वजह है कि आरोपी बेखौफ अपराध किए जा रहे हैं? चाहे घर में कोई नजदीकी रिश्तेदार हो या दफ्तर का सहकर्मी, महिलाओं की सुरक्षा पर हर जगह प्रश्नचिन्ह लगा है। भारत में 2014 से 2017 के बीच कार्यस्थल पर यौन शोषण के मामले 54% बढ़े हैं। लोकसभा में पेश आंकड़ों के मुताबिक इन चार सालों में 2500 से ज्यादा ऐसे मामले दर्ज किए गए हैं। वहीं नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स ब्यूरो (एनसीआरबी) की रिपोर्ट के मुताबिक 90% दुष्कर्म के मामलों में अपराधी पीड़िता की पहचान वाला होता है। जो या तो कोई उसका नजदीकी रिश्तेदार होता है या दोस्त, सहकर्मी या फिर पड़ोसी। हर 12 मिनट में भारत में एक बच्ची या महिला यौन शोषण की शिकार होती है। बावजूद इसके इन मामलों को लेकर जो गंभीरता और संवेदनशीलता कानूनी और सामाजिक तौर पर दिखाई जानी चाहिए उसका पूरी तरह अभाव है। शायद यही वजह है कि हजारों महिलाओं द्वारा मीटू अभियान में सुनाई दर्दनाक दास्तां अहमियत नहीं रखती। कानून अपनी गति से रेंगता है। अमेरिका वाइनस्टीन को सजा सुनाता है और हम इंतजार करते रह जाते हैं ऐसे किसी उदाहरण का जो उन पीड़िताओं के लिए मरहम साबित हो। दुर्भाग्य है कि अब तक यौन शोषण के ज्यादातर वीवीआईपी अपराधी आराम से अपने घरों में हैं। जरूरत बस यह है कि भारतीय कानून अमेरिका के इस मामले से सबक ले।

Date:29-02-20

सवाल, पक्षियों की आखिर अहमियत क्या है ?

हाल ही में जारी स्टेट ऑफ इंडिया बर्ड्स 2020 रिपोर्ट का डेटा बेहद चौंकाने वाला है

रोहिणी निलेकणी

बसंत का मौसम है। मौसम पंछियों वाला। देश में भले आप कहीं भी रहते हों, घने जंगल से लेकर बियाबान रेगिस्तान या फिर गली-मोहल्लों वाले किसी शहर में। संभावना है कि सुबह आपकी नींद पक्षियों के चहचहाने से खुलती होगी। फिर भले वह कौआ हो या कोयल, पक्षी देश में हर जगह मिल जाएंगे। दुनियाभर में गिने-चुने मुल्क हैं जहां हमारे देश जैसी मुख्तलिफ पक्षियों की आबादी है। बर्ड वॉचर अब तक 867 प्रजातियां देखने की बात दर्ज कर चुके हैं। जिनमें स्थानीय भी हैं और प्रवासी भी।

सच तो ये है कि दशकों तक हमारे उपमहाद्वीप ने साइबेरिया जैसी मीलों दूर जगहों से आए प्रवासी पक्षियों का स्वागत किया है। हम्पी के पास लकुंड़ी गांव में हजारों साल पुराने चालुक्य मंदिर की बाहरी दीवारों पर प्रवासी पक्षियों की आकृतियां उकेरी हुई है। जिसमें हंस, सारस और फ्लेमिंगो तक शामिल हैं।

देखा जाए तो हमारी संस्कृति में पक्षी बेहद लोकप्रिय हैं। हमें यह याद दिलाने तक की जरूरत नहीं कि देवी देवताओं के वाहन कौन से पक्षी हैं या फिर हमारे राजघरानों के प्रतीकों में किन पक्षियों के चिह्न थे। संगीत हो या फिर कला हर एक में पक्षी मौजूद हैं। हर बच्चे को पंछियों की कहानियां याद हैं, चतुर कौए की कहानी तो याद ही होगी, हिंदुस्तान की कई कहानियों में पक्षी हैं। हमारे पास 3000 साल पहले यजुर्वेद में दर्ज एशियाई कोयल की परजीवी आदतों का डेटा है। पक्षी हमारे पक्के साथी हैं, शारीरिक तौर पर भी और सांस्कृतिक रूप में भी।

हालांकि हाल ही में जारी हुए स्टेट ऑफ इंडिया बर्ड्स 2020 रिपोर्ट का डेटा बेहद चौंकाने वाला है। यह देश में पक्षियों के बहुतायत में होने के चलन, संरक्षण स्थिति का अपनी तरह का पहला विस्तृत आकलन है। भारत में पक्षियों के डेटा को इक्ट्ठा करने एनसीएफ, एनसीबीएस और ए ट्री जैसे दसियों संगठन साथ आए हैं। उन्होंने 15,500 आम लोगों के 1 करोड़ ऑब्जरवेशन पर बहुत भरोसा जताया है। जिन्होंने आसानी से इस्तेमाल होने वाले 'ई बर्ड' प्लेटफॉर्म पर अपना डेटा रिकॉर्ड किया है। डेटा के मुताबिक 867 प्रजातियों में से 101 को संरक्षण की बेहद ज्यादा, 319 को सामान्य और 442 को कम जरूरत है। 261 प्रजातियों के लिए लंबे वक्त के ट्रेंड समझे गए जिसमें से 52 प्रतिशत जो कि आधे से ज्यादा हैं, उनकी संख्या साल 2000 के बाद से घटी है। जबकि इनमें से 22 प्रतिशत की संख्या काफी ज्यादा घटी है। 146 प्रजातियों के लिए सालाना ट्रेंड पढ़े गए और उनमें से 80 प्रतिशत की संख्या घट रही है और 50 प्रतिशत की संख्या खतरनाक स्तर पर है। इस स्थिति पर तुरंत ध्यान देने की आवश्यकता है।

इस रिपोर्ट के आने से पहले तक हमें अपने पक्षियों के जीवन का भाग्य नहीं पता था। हम चुनिंदा प्रजातियों के बारे में जानते थे, जैसे मोर, जो कि देश का खूबसूरत राष्ट्रीय पक्षी है। जिसकी स्थिति काफी अच्छी है और संख्या ठीक-ठाक बढ़ रही है। और गौरेया जिसके बारे में पर्यावरणविदों को लगा था कि वह खत्म हो रही है। बस इसलिए क्योंकि शहरी इलाकों में उनकी मौजूदगी कम हो रही थी, जबकि असल में उनकी संख्या स्थिर है। इस रिपोर्ट की बदौलत अब मालूम हुआ कि प्रवासी पक्षी जैसे कि गोल्डन प्लोवर, शिकार पक्षी जैसे कि गिद्ध और हैबिटेट स्पेशलिस्ट जैसे कि फॉरेस्ट वैगटेल काफी खतरे में हैं। पर इनकी चिंता हम क्यों करें? इन पक्षियों की आखिर अहमियत ही क्या है?

पक्षी हमारे इकोसिस्टम में अहम भूमिका रखते हैं। वह दूसरी प्रजातियों के लिए परागणकारी हैं, बीज फैलाने वाले, मैला ढोने वाले और दूसरे जीवों के लिए भोजन भी हैं। पक्षी स्थानीय अर्थव्यवस्था का हिस्सा बन सकते हैं, क्योंकि कई लोग उन्हें देखना पसंद करते हैं। देश में बर्ड वॉचर्स की बढ़ती संख्या ने इकोटूरिज्म को बढ़ावा दिया है।

सच तो यह है कि मानव स्वास्थ्य पक्षियों की भलाई से काफी नजदीक से जुड़ा है। और उनकी संख्या घटना खतरे की चेतावनी है। अंग्रेजी का एक रूपक है, 'केनारी इन द कोल माइन'। यानी कोयले की खदान में केनारी चिड़िया। पुराने जमाने में खदान में जाते वक्त मजदूर पिंजरे में केनारी चिड़िया साथ ले जाते थे। यदि खदान में मीथेन या कार्बन डाईऑक्साइड का स्तर ज्यादा होता था तो इंसानों के लिए वह गैस खतरनाक स्तर पर पहुंचे इससे पहले ही केनारी चिड़िया मर जाती थी। और मजदूर खदान से सुरक्षित बाहर निकल आते थे। स्टेट ऑफ इंडिया बर्ड्स रिपोर्ट 2020 इस केनारी चिड़िया की तरह ही हमें आगाह कर सकती है। अपने पक्षियों को बचाने के लिए हम क्या कर सकते हैं? जरूरत है हम देखें, समझें और उनकी रक्षा करें। मैं कई दशकों से पक्षी प्रेमी हूं, पक्षी मुझे बेइंतहा खुशी देते हैं। एक तरीके से उनका कर्ज चुकाने को मैं अपने बगीचे का एक हिस्सा अनछुआ रहने देती हूं ताकि पक्षी वहां आकर अपना घोंसला बना सकें। हमारे आसपास मुनिया, बुलबल और सनबर्ड के कई परिवार फल-फूल रहे होते हैं। मेरी कोशिश होती है कि फल और फूलों वाले कई पौधे लगाऊं। मैं बगीचे के अलग-अलग कोनों में पक्षियों के लिए पानी रखती हूं। अलग-अलग ऊंचाई पर ताकि छोटे-बड़े हर तरह के पक्षी उसे पी सकें। भारत में कई समुदाय पक्षियों के संरक्षण के लिए बहुत कुछ कर रहे हैं। कई बार अपनी आजीविका की कीमत पर भी। कर्नाटक के कोकरेबैल्लूर में गांववालों और दो तरह के पक्षियों की प्रजातियों स्पॉट बिल्ड पेलिकन और पेंटेड स्टॉर्क के बीच एक खास संबंध है। नगालैंड के पांगती में गांववालों ने पिछले दिनों अमूर फालकन को न मारने की कसम खाई है। ये पक्षी बड़ी संख्या में उस इलाके से गुजरते हैं।

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने पहल करते हए राजस्थान की सरकार को लुप्तप्राय सारंग पक्षी को बचाने का निर्देश दिया है। सारंग वह पक्षी है जो मोर चुनते वक्त हमारा राष्ट्रीय पक्षी बनने की दौड़ में था। ऐसे उदाहरण हर जगह हैं, जैसे पक्षी हर तरफ हैं। पक्षी हमारी आंखों को खूबसूरती से भर देते हैं और कानों को चहचहाहट से। वह हमारे दिलों को शांति और सुकून देते हैं। अब बतौर समाज हमें सोचना होगा कि भारत की पक्षियों की अद्भुत विविधता को स्वस्थ रखने के लिए कर क्या सकते हैं। उनके लिए भी और खुद के लिए भी।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:28-02-20

समाज के तनाव में फेक न्यूज

पवन दुग्गल

सोशल मीडिया पर फेक न्यूज, यानी फर्जी खबरें पहले ही कम नहीं थीं, पर दिल्ली में हुए दंगों से पहले और बाद में तो जैसे इनकी बाढ़ ही आ गई। हालात बिगाड़ने में इसकी भूमिका कमतर नहीं मानी जा रही। स्थिति यह है कि हर व्यक्ति कहीं न कहीं से गलत इलेक्ट्रॉनिक सूचनाएं हासिल कर रहा है और धड़ल्ले से उसका प्रसारण करके उसे बढ़ावा दे रहा है। मगर इसका बेजा फायदा वे लोग उठा रहे हैं, जिनका इससे स्वार्थ जुड़ा है। जाहिर है, देश और समाज फर्जी खबरों की बड़ी कीमत चुका रहे हैं। समस्या यह है कि फर्जी खबरों से निपटने के लिए हमारे पास कोई खास कानून नहीं है। फिलहाल सूचना प्रौद्योगिकी कानून (आईटी ऐक्ट) व भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) ही बतौर विकल्प उपलब्ध हैं।

फर्जी खबरों का मतलब होता है, फर्जी इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड। जब कोई इसे तैयार करता है, तो आईपीसी की धारा-469 के तहत उस पर मुकदमा दर्ज किया जा सकता है। मगर यह प्रावधान तब लागू होता है, जब उस फर्जी खबर से किसी की मानहानि हो। हालांकि इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड का इस्तेमाल करके किसी के साथ यदि धोखाधड़ी की जाती है, तो वह कहीं ज्यादा गंभीर व दंडनीय अपराध माना जाता है। तब आईपीसी की धारा-468 के तहत मामला दर्ज किया जाता है, जिसमें सात साल तक के कारावास का प्रावधान है। लेकिन बीते कुछ समय से यह देखने में आया है कि फर्जी इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के मामले में हमारी पुलिस अमूमन आईपीसी की धारा-468 या 469 का इस्तेमाल नहीं करती। यही कारण है कि फेक न्यूज के अपराध में शायद ही कोई जेल जाता है।

कोढ़ में खाज यह है कि फर्जी वीडियो या खबरों को प्रसारित करके लोगों को उकसाने वालों पर कानूनी प्रावधान लागू ही नहीं होता। वर्ष 2008 में आईटी ऐक्ट 66-ए के तहत लोगों को गुमराह करने वाली जानकारियों का प्रचार-प्रसार दंडनीय अपराध तय किया गया था। मगर 2015 में सर्वोच्च न्यायालय ने श्रेया सिंघल व अन्य की जनहित याचिकाओं को स्वीकार करते हुए इसे असांविधानिक घोषित कर दिया। हां, आईटी ऐक्ट 67 के तहत पुलिस जरूर कार्रवाई कर सकती है, लेकिन यह प्रावधान मूलत: अश्लील सामग्रियों के ऑनलाइन प्रकाशन-प्रसारण के संदर्भ में है।

यह हालत तब है, जब 'डीप फेक' के रूप में कहीं गंभीर चुनौती अपने यहां पांव पसार चुकी है। 'डीप फेक' में तकनीक झूठ को इतना ताकतवर बना देती है कि नंगी आंखों से उसकी पहचान करना मुश्किल हो जाता है। इसमें किसी वीडियो में आवाज आदि बदलकर उसे इस तरह से नया रूप दिया जाता है कि आम आदमी के लिए उसे झुठलाना मुश्किल हो जाए। अव्वल तो देश में फर्जी खबरों से लड़ने के लिए कानून का अभाव है, फिर तकनीक दिनोंदिन उन्नत हो रही है, नतीजतन असामाजिक तत्व निर्भीक होकर इंटरनेट पर अपना एजेंडा चलाते हैं। देश के नीति-नियंताओं को यह संकल्प लेना होगा कि भारत को हम फेक न्यूज या डीप फेक की प्रयोगशाला नहीं बनने देंगे। अब इन पर अंकुश लगाना बहुत जरूरी हो गया है।

अभी तो महज शुरुआत है। वक्त बीतने के साथ इसके इतने घिनौने रूप आएंगे कि हमारा आपसी सौहार्द खत्म हो सकता है। आदर्श स्थिति तो यह है कि इन सबको रोकने के लिए खास कानून बनाया जाए और फर्जी खबरों के प्रकाशन-प्रसारण को घिनौना दंडनीय अपराध घोषित किया जाए। मलेशिया ने हाल ही में ऐसा किया है। मगर इसके साथ-साथ हमें पुलिस महकमे और अपनी न्यायपालिका की क्षमता भी बढ़ानी होगी। देश के नेतृत्व को यह एहसास होना चाहिए कि फेक न्यूज या डीप फेक ऐसा जहर है, जो आम लोगों को धीरे-धीरे जहरीला बना रहा है। दिल्ली दंगे के संदर्भ में ही असली वीडियो के साथ फर्जी वीडियो खूब प्रसारित किए गए। इन वीडियो के सहारे लोगों को जमकर उकसाया गया। अन्य संवेदनशील मामलों में भी हमने ऐसा ही देखा है।

सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि विकल्पहीनता की स्थिति में इंटरनेट सेवा रोक देने के उपाय अपनाए जाते हैं। मगर यह ठोस समाधान नहीं है। बल्कि यह कदम कितना नुकसानदेह हो सकता है, मिस्र इसका उदाहरण है। वहां की सरकार ने जैसे ही इंटरनेट सेवा बंद की, 'अरब स्प्रिंग' की शुरुआत हो गई और हुकूमत का तख्ता-पलट कर दिया गया। अपने यहां तो अब जीवन जीने के मौलिक अधिकार में इंटरनेट का इस्तेमाल शामिल कर लिया गया है। ऐसे में, बहुत ज्यादा दिनों तक इंटरनेट सेवा बंद रखना संभव नहीं। हालांकि इलेक्ट्रॉनिक जानकारी जरूर रोकी जा सकती है, मगर वह भी तब, जब देश की अखंडता, प्रभुता और सुरक्षा के लिहाज से ऐसा करना आवश्यक हो, सार्वजनिक कानून-व्यवस्था को खतरा हो या

फिर किसी कानून के उल्लंघन को रोकने की जरूरत पड़े। फिर, सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद जरूरी यह भी है कि इंटरनेट बंद करते ही सरकार इसकी वजह आम लोगों के बीच प्रसारित करे।

स्पष्ट है, फर्जी खबरों को रोकने के लिए हमें विशिष्ट कानून बनाने ही होंगे। जब तक यह नहीं होता, तब तक आईटी ऐक्ट-67 का इस्तेमाल किया जा सकता है, ताकि संवेदनशील इलाकों में भड़काऊ वीडियो प्रसारित नहीं हो पाएं। सोशल मीडिया के तमाम प्लेटफॉर्म पर भी यह दबाव बनाया जा सकता है कि फर्जी वीडियो या खबरों की जानकारी मिलते ही वे तुरंत उसे डिलीट करें। फिलहाल अदालती आदेश द्वारा ही ऐसा करना मुमकिन है, जो कि एक लंबी प्रक्रिया होती है। फर्जी खबरों का नुकसान तुरंत होता है, इसलिए इसे रोकने के उपाय भी जल्द अमल में लाए जाने चाहिए। नया कानून जब बनेगा तब बनेगा, फिलहाल तो मौजूदा कानूनी प्रावधानों का ही सकारात्मक इस्तेमाल जरूरी है।

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date:28-02-20

The Bihar model

Assembly resolution against NRC by JD(U)-BJP government brings a welcome touch of moderation, shows a way

Editorial

On Tuesday, even as communal violence sparked by the new, discriminatory citizenship law raged in parts of the national capital, Bihar took an important step in the right direction. Its assembly unanimously passed a resolution against the proposed National Register of Citizens and for a National Population Register in its 2010 format — that is, an NPR which does not include questions that have stoked fears of it being a first step to the NRC. With this resolution, Bihar became the first NDA-ruled state to come out against the NRC. To be sure, Prime Minister Narendra Modi himself had, in a rally in December, sought to distance his government from the proposal of a nation-wide NRC, which, in tandem with the CAA, has been sharpening anxieties, especially among the Muslim minority. Even so, the fact that Nitish Kumar helmed an unambiguous move that puts his government in the company of states like West Bengal and Kerala on the citizenship issue — even though Nitish continues to support the CAA — and that the state BJP acquiesced and participated in it, is significant. Bihar may even have suggested to India a possible way out of an implacable controversy.

It may well be that hardheaded realpolitik lay at the bottom of the Bihar resolution on Tuesday, not lofty principle or heartfelt anguish at the evident damage being wreaked by the CAA-NRC issue on the country's social fabric. For Nitish, this may well be an apt moment to prod and stake out a bargaining position with partner BJP — the countdown has begun for assembly elections later this year in Bihar and, after successive defeats in Jharkhand and Delhi, and underwhelming showings in Haryana and Maharashtra, the BJP looks more vulnerable in the states than it has in a long time. The NRC issue also presents Nitish an opportunity to gesture to a Muslim vote that is significant in terms of its numbers and is being wooed by rival parties. On its part, the BJP may have been outsmarted or overtaken by Nitish, or

it may have fallen in with his plans because it calculates that, having lost the Shiv Sena in Maharashtra, it cannot afford to alienate another important ally in a crucial state. Whatever be the reason, and whatever the motives of the players, however, the Bihar resolution is very welcome. At a time when the citizenship debate has become the trigger and pretext for communal polarisation and violence, and precious lives have been lost, it brings a reassuring touch of moderation.

The BJP must build on this moment in the state. It must invoke the PM's statement in December, and now the Bihar assembly resolution, to walk back from the spectre of a nationwide NRC, and to reach out to a minority community that is feeling fearful and insecure. In this volatile moment, it is imperative that the Centre takes its cue from Bihar.

THE HINDU

Date:28-02-20

A browning east

Climate change impact warnings for Eastern Ghats underscore need for forest protection

Editorial

If the Western Ghats are the crown jewels of India's natural heritage, the Eastern Ghats spread across some 75,000 sq. km. from Odisha to southern Tamil Nadu, play an important dual role: fostering biodiversity and storing energy in trees. In these mountains exist a reservoir of about 3,000 flowering plant species, nearly 100 of them endemic, occurring in the dry deciduous, moist deciduous and semi-evergreen landscapes. Many animals, including tigers and elephants, and some 400 bird species are found in these discontinuous forests that receive an annual average rainfall of 1,200 mm to 1,500 mm. Crucially, many parts, primarily in Odisha, Andhra Pradesh and Tamil Nadu, provide forest produce and ecosystem services to millions. Given the key functions that the lands perform, in modulating climate, fostering biodiversity and providing sustenance, new research findings arguing that the Ghats face a serious threat from climate change, and temperature variations are a cause for worry. It is noteworthy that a disruption of the annual average temperature and diminished rainfall would rob the productivity of these forests, in terms of their ability to store carbon, and provide subsistence material. Existing data point to the impoverishment of areas experiencing rainfall reduction in the driest quarter of the year and a rise in seasonal temperature, through reduced plant species diversity and a dominant role for herbs over trees.

Protecting the Eastern Ghats, which are separated by powerful rivers — the Godavari and Krishna, to name just two — is an ecological imperative. India is committed, under the Paris Agreement on Climate Change, to create an additional carbon sink of 2.5 to 3 billion tonnes through enhanced forest and tree cover. Yet, forest protection policies have often failed dismally. By some estimates, the Ghats have shrunk by 16% over the past century, and just one region, Papikonda National Park, lost about 650 sq. km. in two decades from 1991. Relieving the pressure on forests can be done through policies that reduce extraction

of scarce resources and incentivise settled agriculture. Schemes for restoration of forest peripheries through indigenous plant and tree species, matching national commitments, could qualify for international climate finance, and must be pursued. At a broader level, the response to the warnings issued by researchers from IIT Kharagpur, International Crops Research Institute for the Semi-Arid Tropics and the University of Hyderabad in a recent publication on changes to temperature and rainfall calls for decisive steps to mitigate carbon emissions. Improving tree cover nationally is certain to confer multiple benefits, including modulation of the monsoon, improved air quality and wider spaces for biodiversity to persist.